

त्रयोदशोऽध्यायः
स्त्रीधर्मकथनम्
स्त्रीधर्म का कथन

ब्रह्मोवाच

प्रथमं प्रतिबुध्येत प्रवर्तेत स्वकर्मसु। पश्चाद्भृत्यजनस्यापि भुञ्जीत च शयीत च॥ १॥
भर्त्रा विरहिता स्त्री च श्वशुराभ्यां विशेषतः। देहलीं नातिवर्तेत प्रतीकारे महत्यपि॥ २॥
उत्थाय प्रथमं भर्तुरविज्ञाता न निष्क्रमेत्। क्षपायां सावशेषायां रात्रौ वा वासरादिषु॥ ३॥
तद्वासभवनस्यैव शनैराहूय कार्मिकान्। स्वव्यापारेषु तान्सर्वास्तत्र तत्र नियोजयेत्॥ ४॥

ब्रह्मदेव कहते हैं- स्त्री पुरुष के जागने से पूर्व जाग जाये तथा कर्मरत हो जाये। वह नौकरों-दासों के बाद ही शयन एवं भोजन करे। जो स्त्री स्वामी तथा श्वसुर-सास से रहित है, वह अत्यन्त महान् कठिनाई आने पर भी अपने गृह की देहरी न लाँचे। पति से पहले शय्या से उठकर उसे अज्ञातरूप से पति को बताये बिना बाहर नहीं जाना चाहिये। काम करने वालों को अपने कक्ष पर बुलाकर उन्हें कार्यों में नियुक्त करे॥ १-४॥

विवृद्धस्य ततो भर्तुर्निर्वर्त्यवश्यकं विधिम्। गृहकार्याणि सर्वाणि विदधीताप्रमादतः॥ ५॥
मुक्त्वावासकनेपथ्यं कर्मयोग्यं विधाय च। तत्कालोचितकर्तव्यमनुतिष्ठेद्यथाक्रमम्॥ ६॥
महानसं सुसम्पृष्टं चुल्ल्यादिविहितार्चनम्। सर्वोपकरणोपेतमसम्बन्धमनाविलम्॥ ७॥
न चातिगुह्यं प्रकटं प्रविभक्तक्रियाश्रयम्। भर्तुराप्तजनाकीर्णं गूढं कक्षादिवर्जितम्॥ ८॥

जब पति जाग जाये तब स्वकार्य से निवृत्त होकर अन्य कार्य को सावधानी से करना चाहिये। जब स्त्री घर का कार्य कर रही हो, तब रात्रिकालीन वस्त्राभूषण को सुरक्षित रखकर कार्य के अनुकूल वस्त्रादि धारण करके समयानुसार कार्य सम्पन्न करे। पाकशाला को भली प्रकार स्वच्छ करके चूल्हे आदि का सम्यक् अर्चन करे फिर उसमें आवश्यक सामग्री तथा सामान रखे तथा सविधि स्वच्छता भी रखे। पाकशाला को अति ढकी जगह में न बनाये। एकदम खुली जगह में भी न बनाये। सभी श्रेणी के भोजन बनाने हेतु पृथक्-पृथक् व्यवस्था वहाँ हो। पाकशाला वही हो जहाँ पति के गूढ़ लोग रहते हों। गूढ़ स्थान हो तथा कोठरियों से रहित हो॥ ५-८॥

तत्र पाकादिभाण्डानि बहिरन्तश्च कारयेत्। निर्णिक्तमलपङ्क्तानि शुक्तिवल्कादिचूर्णकैः॥ ९॥
निशि कुर्वीत धूमार्चिः शोधितानि दिवातपैः। दधिपात्राणि कुर्वीत सदैवान्तरितानि च॥ १०॥
साधुकारितदुग्धेषु शोधितेषु दिवातपे। ईषद्गृह्योक्तपात्रेषु स्वच्छं येन भवेद्दधि॥ ११॥

ऐसे गुप्त स्थल पर पाकशाला होनी चाहिये। वहाँ के पात्र बाहर-भीतर से स्वच्छ हों। कीचड़ तथा जूठन से रहित हों। दिन में दही के पात्र (मृत्तिका पात्र) को धूप में रखे। रात में उसमें धुआँ दिखलाकर अलग रखे। दिन में धूप में सुखाये गये पात्र में दुग्ध को स्वच्छता से रखे। दधिपात्र की दधि को स्वच्छ किये गये पात्र में रखे जिससे दधि की स्वच्छता बनी रहे॥ ९-११॥

स्नेहगोरसपाकादि कृत्वा सुप्रत्ययेक्षितम्। कुर्यात्स्वयमधिष्ठाय भर्तुः पाकविधिक्रियाम्॥ १२॥
किं प्रियं किमाग्नेयं षड्रसाभ्यन्तरेषु च। किं पथ्यं किमपथ्यं च स्वास्थ्यं वास्य कथं भवेत्॥

इति यत्नाद्विजानीयादनुष्ठेयं च तत्तथा॥ १३॥

तैल, गोरस तथा पाकक्रिया पर सम्यक् दृष्टि रखकर पति हेतु स्वयं भोजन बनाये। यह बात देखती रहे कि भोजन के षट्सं में पति को कौन सा रस रुचिकर है? उनकी जठराग्नि को दीप्त करने हेतु कौनसा पदार्थ प्रियकर है, क्या पथ्य-अपथ्य है? क्या खाने से उनका स्वास्थ्य अक्षुण्ण रहेगा? यह सब ज्ञान करके तदनुरूप कार्य करे॥ १२-१३॥

नित्यानुरागं सत्कारमाहारं सुपरीक्षितम्। महानसादौ कुर्वीत जनमाप्तं क्रमागतम् ॥ १४॥
शत्रुं दायादसम्बन्धं क्रुद्धभीतावमानितम्। अवाच्योपगृहीतं वा नैवमादीनि योजयेत्॥ १५॥
पुनः पुनः प्रतिष्ठाप्य गुप्तं स्वयमधिष्ठितम्। भर्तुर्ग्राह्यपानादि विदध्यादप्रमादतः॥ १६॥
पाकं निर्वर्त्य मात्राणां कृत्वा स्वेदप्रमार्जनम्। गन्धताम्बूलमाल्यादि किञ्चिदादाय मात्रया॥ १७॥
यथौचित्यादितत्काले भर्तुर्विनयसम्भ्रमैः। तत्कालानुगतात्यर्थमाहारमुपपादयेत्॥ १८॥

पाकशाला में प्रेमपूर्वक पहले से परीक्षित आहार को आदर के साथ ग्रहण करे। पहले श्रेष्ठजनों को भोजन प्रदान करे। शत्रु, हिस्सा माँगने वाले, क्रुद्ध, भयभीत, पहले अपमानित हो गये अथवा किये गये, जिसे कभी भी गाली आदि दी गयी हो, इनको पाकशाला में नियुक्त न करे। अपने हाथों पकाये सुस्वादु-सुरक्षित, सम्यक् रूपेण प्रस्तुत किये गये भोजन तथा पानादि को पति के समक्ष सावधानी से ही रखना उचित है। भोजन से निवृत्त होकर शरीर के स्वेद को पोंछ ले। पति के स्वेदादि को भी पोंछ दे। हाथ धोकर सुगन्धित इत्र, ताम्बूल, माला आदि जो उचित हो पति के हाथों में विनय तथा सत्कार के साथ निवेदित करे। ऋतु-काल के अनुसार आहार-व्यवस्था करनी चाहिये॥ १४-१८॥

स्वभावामयकालानां वैपरीत्येन सर्वदा। सर्वमाहारपानादि प्रयोज्यं तद्विदो जगुः॥ १९॥
हीनतुल्याधिकत्वेन भर्ता पश्यति यं यथा। तं तथैवाधिकं पश्येन्न्यायतः प्रतिपत्तिषु॥ २०॥
सापत्नकान्यपत्यानि पश्येत्स्वेभ्यो विशेषतः। भगिनीवत्सपत्नीश्च तद्वधून्निजबन्धुवत्॥ २१॥
ग्रासाच्छादशिरोभ्यङ्गस्नानमण्डनकादिकम्। सपत्नीनामकृत्वा तु आत्मनोऽपि न कारयेत्॥ २२॥
व्याधितानां चिकित्सार्थमौषधादिकमादरात्। विदध्यादात्मनस्तासां सर्वाश्रितजनस्य च॥ २३॥

भोजन ग्रहण करने वाले के स्वभाव, राग तथा काल की विपरीतता देखकर भोजन-पान आदि की व्यवस्था करे। ऐसा विज्ञ लोगों का कथन है। पति जिस वस्तु को, जिस व्यक्ति को हीन, तुल्य अथवा श्रेष्ठ दृष्टि से देखता हो, पत्नी को उस व्यक्ति तथा वस्तु के साथ तद्रूप अथवा उससे भी अधिक वैसा व्यवहार न्यायतः करना चाहिये। अपनी सौत के बालकों को अपने बालक से भी अधिक स्नेह करे। सौतों को सगी बहन के समान तथा सौतों के भ्राताओं को अपने भ्राता के समान जाने। यदि भोजन, वस्त्र, शिर पर तैल लगाना, स्नान, आभूषणादि से सज्जित होना यदि सौतों नहीं करतीं तो अपने लिये भी न करे। अपने तथा सपत्नीगण के आश्रितों की रुग्णता होने पर औषधि तथा चिकित्सा व्यवस्था सादर करे॥ १९-२३॥

तच्छोके शुचमादद्यात्तत्तुष्टौ मुदमावहेत्। भृत्यबन्धुसपत्नीनां तुल्यदुःखसुखा भवेत्॥ २४॥
लब्धावकाशा स्वप्याच्च निशि सुप्तोत्थिता क्रमात्। अन्यत्र व्ययकर्तारं पतिं रहसि बोधयेत्॥ २५॥
यदवद्यं सपत्नीनां स्वयमस्मै न तद्वदेत्। दौःशील्यादि तु सापायं गूढमस्मै निवेदयेत्॥ २६॥
दुर्भगामनपत्यां वा भर्त्रा चातिरिक्ताम्। अदुष्टां सम्यमाश्वास्य तेनैतामनुकूलयेत्॥ २७॥

जब सौतों को शोक हो तब स्वयं भी शोकमग्न हो जाये, उनकी प्रसन्नता से स्वयं प्रसन्न हो जाये। अपने बन्धु-भृत्य सौत के दुःख-सुख को अपना सुख-दुःख माने। नित्यकर्मों से अवकाश मिल जाने पर गृहिणी रात्रि में शयन करे तथा सुबह स्वयं उठे।

निपुण गृहिणी उस पति को अकेले में प्रबोधित करे जो व्यर्थ कार्य में अपव्यय करे। यदि सौतें ऐसा आचरण करें, जो कहने योग्य न हो, तब उसकी शिकायत स्वयं न करे। यदि उसके आचरण से सम्बन्धित दोष विकृत हों तब अकेले में पति से वह सब कहे। जो सौत सन्तानरहित, अभागी, पति से तिरस्कृत परन्तु दोषरहित सपत्नी को सम्यक् आश्वासन प्रदान करे। ऐसा प्रयत्न करना चाहिये जिससे पति पुनः उसके अनुकूल हो जाये॥२४-२७॥

तथा वाग्दण्डपारुष्यैर्जनं भर्त्रा विपीडितम्। कुर्याद्विधेमाश्वास्य न चेद्दोषाय तद्भवेत् ॥ २८॥

मत्वात्मनोनपत्यत्वं कालं चापि गतं बहुम्। सन्तानादिकमुद्दिश्य कार्यमात्मनिवेदनम्॥ २९॥

यच्चान्यदपि जानीयात्किञ्चिदस्य चिकीर्षितम्। तत्किंलाजानतीवास्य सिद्धमेव प्रदर्शयेत्॥ ३०॥

वह पति के दुर्व्यवहार, दण्ड तथा कठोर व्यवहार से पीड़ित भृत्यों को इस प्रकार से आश्वासन दे, ताकि पति इसे बुरा न माने तथा उसके चित्त को क्लेश न हो। अन्यथा अहित की सम्भावना रहती है। यदि उसे दीर्घकाल में भी सन्तति न हो तब वह स्वयं पति से इस सम्बन्ध में कहे। यदि उसे पति के किसी गुप्त मन्तव्य की अथवा इच्छा की सूचना मिल जाये, तब वह उसे इस प्रकार से पूर्ण करे जिससे पति को यह जानकारी न हो सके कि पत्नी को उसके मनोरथ का ज्ञान हो गया था॥२८-३०॥

वैवाहिकं विधिं भर्तुः सर्वं कृत्वा ससम्भ्रमम्। परिणीतां च तां पश्येन्नित्यं भगिनिकामिव॥ ३१॥

पूजां सम्बन्धिवर्गस्य मङ्गलं मङ्गलानि च। कुर्यादभिनवोढायाः सुप्रहृष्टेन चेतसा॥ ३२॥

मातृवच्छिक्षयेदेनां गृहकृत्येष्वमत्सरा। प्रदेशिकविधिं वास्या विदध्याद्यत्नतः स्वयम्॥ ३३॥

एवं भर्तुरभिप्रायं सर्वमित्यादिकारयेत्। सुखार्थं वापि सन्त्यज्य स्त्रीणां भर्ताधिदेवता॥ ३४॥

(सन्तान हेतु) पति की इच्छा होने पर उसकी इच्छित कन्या से उसका विवाह त्वरित रूप से सम्पन्न कराकर उसे अपनी बहन ही माने। उस नववधू के विवाह को वह स्वयं प्रसन्नचित्त होकर समस्त सम्बन्धीगण तथा पारिवारिक लोगों का सत्कार करके मण्डपादि विधान को पूर्ण करके सम्पन्न कराये। गृहकार्य हेतु वह सदा मातृवत् उस नववधू सौत को प्रशिक्षित करे। वह द्वेषहीन होकर उसका पति के साथ प्रथम समागम सम्पन्न कराये। इस रीति से वह पति की इच्छा को यथानुकूल सम्पन्न करे। पति के सुखार्थ स्त्री को सदा यही प्रयत्न करते रहना चाहिये। स्त्रीगण हेतु पति ही देवता हैं॥३१-३४॥

भर्ताधिदेवता नार्या वर्णा ब्राह्मणदेवताः। ब्राह्मणा ह्यग्निदेवास्तु प्रजा राजन्यदेवताः॥ ३५॥

तासां त्रिवर्गसंसिद्धौ प्रदिष्टं कारणद्वयम्। भर्तुर्यदनुकूलत्वं यच्च शीलमविलुप्तम्॥ ३६॥

न तथा यौवनं लोके नापि रूपं न भूषणम्। यथा प्रियानुकूलत्वं सिद्धं शश्वदनौषधम्॥ ३७॥

वयोरूपादिहारिण्यो दृश्यन्ते दुर्भगाः स्त्रियः। वल्लभा मन्दरूपाश्च बह्व्यो गलितयौवनाः॥ ३८॥

स्त्री के देवता हैं पति। क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र के देवता हैं ब्राह्मण। ब्राह्मण का देवता है अग्नि। प्रजागण का देवता है राजा। स्त्रीगण की धर्म, अर्थ, काम सिद्धि हेतु दो उपाय कहे गये हैं। प्रथम है पति के प्रति उसका अनुकूल व्यवहार तथा दूसरा है उसका पवित्रशील सदाचरण। स्त्रीगण को सुख देने वाला न तो यौवन है, न रूप ही सुख देने वाला है। न भूषण ही सुखप्रद है। पति की अनुकूलता ही उसके शाश्वत कल्याण का एकमात्र औषध है। यह देखा गया है कि सुन्दर यौवन तथा मनोहारी रूपधारिणी स्त्रीगण भी अभागिनी तथा दुर्भगा होती हैं। एतद्विपरीत उनसे हीनरूप वाली विगत यौवना, हीन कटियुक्ता नारी अपने पति की प्रिय तथा सुखी होती हैं॥३५-३८॥

तस्मात्प्रियत्वं लोकानां निदानं योग्यतापरम्। तां विनान्ये गुणा वन्ध्याः सर्वेऽनर्थकृतोऽपि वा॥ ३९॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन विदध्यादात्मयोग्यताम्। परचित्तज्ञता चास्या मूलं सर्वक्रियास्विह॥ ४०॥

बहिरागच्छतो ज्ञात्वा कालं सम्मृज्य भूमिकाम्। सज्जीकृतासना तिष्ठेत्तस्याज्ञां प्रतितत्परा॥ ४१॥

स्वयं प्रक्षालयेत्पादावुत्थाप्य परिचारिकाम्। तालवृन्तादिकैः कुर्याच्छ्रमस्वेदापनोदनम्॥ ४२॥

योग्यता ही लोक में प्रिय बनाती है। पति को जो नारी अनुकूल नहीं कर पाती, उसके सभी गुण बेकार हैं। इस अनुकूलता को जो नारी अर्जित नहीं करती, उसके सारे गुण तो अनर्थप्रद ही होते हैं। नारीगण सभी उपायों से इस योग्यता का अर्जन करें। स्त्रीगण की सर्वसफलता का मूल है, अन्य के चित्त की बात जान लेने वाली क्षमता। स्त्री पति को प्रवास से अथवा बाहर से आता जानकर गृह की भूमि-आँगन आदि स्वच्छ करे। शय्या को सज्जित करके प्रतीक्षा करे तथा पति की आज्ञा का तत्पर होकर पालन करे। दासी को वर्जित करके स्वयं उसका चरण प्रक्षालन करे। ताड़ के पंखे आदि से हवा करके उसके स्वेद तथा मार्गश्रम को दूरीभूत करे॥३९-४२॥

आहारस्नानपानादौ सस्पृहं यत्र लक्षयेत्। तदिङ्गितज्ञा तत्त्वेन सिद्धमस्मै निवेदयेत्॥ ४३॥
सपत्नीपतिबन्धूनां भर्तृचित्तानुकूल्यतः। प्रतिपत्तिं प्रयुञ्जीत स्वबन्धूनां न वै तथा॥ ४४॥
तेषु चात्मनि च ज्ञात्वा भर्तृचित्तं प्रसादयेत्। प्रतिपत्तिं तथाप्येषां नाद्रियेत स्वबन्धुषु॥ ४५॥

पति को विशेषतः आहार, स्नान, पान आदि जिसके प्रति अधिक उत्सुक जाने, वही प्रस्तुत करे। पत्नी-पति की इच्छा तथा मनोगत संकेत को अवश्य जाने। पति की मनोवृत्ति के ही आधार पर सौत, पति के बन्धुगण के साथ प्रेम एवं सहानुभूति का व्यवहार करे। पति जिसे अधिक चाहता हो, उससे उतना प्रिय व्यवहार करे। पति जिससे द्वेष करता हो, पत्नी भी उससे वही द्वेष करती रहे। लेकिन दूती से पहले यह अभिज्ञता अवश्य कर ले कि स्वयं उसके प्रति पति का क्या दृष्टिकोण है? सौत तथा पति के बन्धुवर्ग उस स्त्री के प्रति आदर, सत्कार, प्रतिष्ठा को प्रदर्शित करते हैं, इन सम्मानप्रद व्यवहारों की चर्चा अपने बन्धुवर्ग के सामने नहीं करनी चाहिये॥४३-४५॥

अपि भर्तुरभिप्रेतं नारी तत्कुलवासिनी। सत्कारैर्निजबन्धूनां तेन नोपैति वाच्यताम्॥ ४६॥
पूज्य एव हि सम्बन्धः सर्वावस्थासु योषिताम्। कस्ततोऽप्युपकारांशं लिप्सते कुलजः पुमान्॥ ४७॥
सम्पूज्य स्वसुतां तस्मै विधिवत्प्रतिपाद्यते। ततोऽस्या लिप्सते नाम किमकार्यमतः परम्॥ ४८॥
कन्यां प्रदाय यैर्वृत्तिरात्मनः परिकल्प्यते। दासभण्डनटादीनां मार्गोऽयं न महात्मनाम्॥ ४९॥

पतिकुल में रहने वाली तथा पति के मनोभाव से अवगत रहने वाली नारी अपने भी बन्धुवर्ग से सत्कृत होती है तथा कभी भी निन्दित नहीं होती। सर्वावस्था में स्त्री का सम्बन्ध पूज्य कहा गया है। उसके पितृकुल में ऐसा कौन सा पुरुष है जो ऐसी स्त्री से उपकार अथवा लाभ चाहेगा? लोग अपनी कन्या की पूजा करके उसे जामाता को दान कर देते हैं। ऐसी स्थिति में यदि वे उस कन्या से लाभार्जन की कामना करते हैं। तब इससे अधिक निन्दाजनक कार्य क्या होगा? जिसे कन्या प्रदान कर दी गयी, उसी से जीविका चाहना यह परम्परा तुच्छ दास, भांड, नट आदि की है। यह कृत्य उच्च लोगों का कदापि नहीं है॥४६-४९॥

तस्मात्स्त्रीबांधवा नित्यं प्रीतिमात्रैकसाधिनीम्। प्रतिपत्तिं समादद्युः सम्बन्धिभ्यः प्रसङ्गिनीम्॥ ५०॥
तस्या भर्तरि रक्षेत प्रीतिं लोके च वाच्यताम्। आत्मनोऽसत्प्रवादं च चेष्टेरन्साधुवृत्तयः॥ ५१॥
एवं विज्ञाय सद्गुणं स्त्री वर्त्तत तथा सदा। येन तत्परिवर्गस्य भवेद्भर्तुश्च सम्मता॥ ५२॥
प्रियापि साधुवृत्तापि विख्याताभिजनापि च। जनापवादात्सम्प्राप सीतानर्थं सुदारुणम्॥ ५३॥

अतः वधू के बन्धु-बान्धवगण अपने सम्बन्धी तथा जामाता से वह व्यवहार करें जो परस्पर प्रेम तथा सहानुभूति बढ़ाने वाला हो। जो समयानुकूल बढ़ता जाये। ऐसी स्त्रियों के सत्कर्मरत बन्धुवर्ग अपने व्यवहार से पति तथा वधू में प्रीतिवर्द्धन हेतु लोक में वधू की निन्दा न करे तथा इससे स्वयं अपने ऊपर कोई अपवाद आरोपित नहीं होने दें। इसी तरह वधू भी समझ-बूझकर अपने सत्कर्तव्यों का सदा पालन करे। इससे उसके बन्धु-बान्धव तथा पति भी लोक में सम्मानित बने रहेंगे। पति की परमप्रिय, सत्कर्मरता, उच्चकुलजात यशस्विनी सीतादेवी ने भी लोकापवाद रूप भीषण कष्ट सहा॥५०-५३॥

सर्वस्यामिषभूतत्वादगुणदोषानभिज्ञतः। प्रायेणाविनयौचित्यात्स्त्रीणां वृत्तं हि दुष्करम्॥ ५४॥
अगृह्यत्वान्मनोवृत्तेः प्रायः कपटदर्शनात्। निरङ्कुशत्वाल्लोकस्य निर्वाच्या विरलाः स्त्रियः॥ ५५॥
दैवयोगादयोगत्वादव्यवहारानभिज्ञतः। वाच्यतापत्तयो दृष्टाः स्त्रीणां शुद्धेऽपि चेतसि॥ ५६॥
तासां दैवप्रतीकारो नोपभोगादृते भवेत्। चारित्रं लोकवृत्तं च एतयोर्विदुरौषधम्॥ ५७॥

वे सबसे अधिक सुन्दर तथा आकर्षक होती हैं, उनमें गुण-दोष की अनभिज्ञता रहती है। अनुदारता तथा अविवेक के कारण तथा अविनय के कारण उनमें जो कमी आती है उसकी तुलना में उनके कर्तव्य अत्यन्त कठोर एवं दुष्कर होते हैं, जब वे अन्य की मनोवृत्ति नहीं जान पातीं। प्रायः सभी व्यवहारों में कपट का सामना करने तथा लोगों की प्रवृत्ति की निरंकुशता के कारण कतिपय स्त्रियाँ ही ऐसी होती हैं जो कभी निन्दा की पात्र न बनी हों। जो स्त्रियाँ शुद्ध चित्त वाली हैं, वे भी दैवयोग के कारण, तथा स्वयं में व्यवहार कुशलता का अभाव एवं अपनी अयोग्यता के कारण शुद्धचित्त वाली होने पर भी निन्दित एवं आपत्तिग्रस्त होते देखी जाती हैं। इस दैव (पूर्व जन्मार्जित कर्म का) का प्रतिकार उसका भोग भोगने से ही समाप्त होता है। चरित्र तथा व्यवहारपटु होना ही ऐसे उपाय हैं, जो अपवाद दूर करने की औषधि हैं॥५४-५७॥

हिन्दोलकादिक्रीडायां प्रसक्तां तरुणीं निशि। रममाणं विटैः सार्धं विधवां स्वैरचारिणीम्॥ ५८॥

वृद्धादिभार्या सज्जायां यानगेयादिसङ्गिनीम्। कः श्रद्धयात्सतीत्येवं साध्वीमपि हि योषितम्॥ ५९॥

यौ चासामिङ्गिताकारौ सन्दिग्धार्थप्रसाधकौ। तयोस्तत्त्वपरिज्ञानं विषयो योगिनां यदि॥ ६०॥

यदि कोई स्त्री रात्रिकाल में हिंडोला आदि क्रीड़ा में रत रहती है अथवा भांड आदि निम्नस्तरीय लोगों के साथ स्वैराचार करती है अथवा विधवा होकर भी यही सब करती है अथवा कोई स्त्री युवती होकर भी वृद्ध की पत्नी है। अथवा चरित्रयुक्त होकर भी सवारी अथवा नृत्य-गीतादि में विशेष रुचि वाली है, तब कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो साध्वी-चरित्रवती को भी श्रद्धा से देखेगा? इन नारीगण के संकेत तथा आकार भी संदेहास्पद अर्थ की ही पुष्टि करने वाले होते हैं। उनके संकेतों तथा आकार को तत्त्वज्ञानी योगीगण ही ज्ञात कर सकते हैं। वे तभी जान सकते हैं, जब उनमें जानने की इच्छा जाग्रत हो॥५८-६०॥

तस्माद्यथोक्तमाचारमनुतिष्ठेत्सुसंयता। मिथ्यालग्नोष्यसद्वादः कम्पयत्येव तत्कुलम्॥ ६१॥

त्रिकुल्या वाच्यता रक्ष्या प्रतिष्ठाप्यथ सन्ततिः। भर्तुस्त्रीवर्गसिद्धिश्च साध्यं तत्कुलयोषिताम्॥ ६२॥

पातयन्त्येव दौःशील्यादात्मानं सकुलत्रयम्। उद्धरन्ति तदैवैताः स्त्रियश्चारित्रभूषणाः॥ ६३॥

अतएव कुलवधू संयम तथा सदाचार से युक्त रहे, उनका पालन करे। झूठे अपवादों से भी स्त्रीगण का परिवार आन्दोलित हो उठता है। कुलवधू को संयम तथा शान्तिमय सदाचरण का पालन करना चाहिये। कुलवधू को चाहिये कि तीन कुल की रक्षा (निन्दा से) करे। वह अपनी सन्तान की तथा अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करे। वह अपने पति के धर्म, अर्थ, काम सिद्धि हेतु सहायक हो। यही उसके जीवन का लक्ष्य हो। यदि वह असत् व्यवहार करेगी, तब स्वयं तथा अपने तीन कुलों का पतन करा देगी। वह तो अपने उत्तम चरित्ररूपी आभूषण से उक्त तीनों कुल का उद्धार कर सकती है॥६१-६३॥

भर्तृचित्तानुकूलत्वं यासां शीलमविच्युतम्। तासां रत्नसुवर्णादि भार एव न मण्डनम्॥ ६४॥

लोकज्ञाने परा कोटिः पत्यौ भक्तिश्च शाश्वती। शुद्धान्वयानां नारीणां विद्यादेतत्कुलव्रतम्॥ ६५॥

तस्माल्लोकश्च भर्ता च सम्यगाराधितो यया। धर्ममर्थं च कामं च सैवाप्नोति निरत्यया॥ ६६॥

॥ इति श्रीभविष्यमहापुराणे शतार्थसाहस्र्यां संहितायां ब्राह्मे पर्वणि

स्त्रीधर्मकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः॥ १३॥

पति की मनोवृत्ति के अनुरूप चलने वाली, शील-सदाचारवती का तो आभूषण उसके सत्गुण हैं। बाकी रत्नाभरण आदि तो उसके लिये भार रूप हैं। शुद्ध तथा उत्तमकुल में जन्मी स्त्री का यह कुलव्रत हो कि वे लौकिक व्यवहारों में निष्णात तथा पति की अनन्यभक्तियुक्त हों। इस आलोचना का यह सार है कि जो कुलवधू लौकिक व्यवहार से अपने पूज्य पति की आराधना कर लेती है, उसे जीवनकाल में कोई भी हानि नहीं होती। वह त्रिवर्ग सिद्धि प्राप्त करती है॥६४-६६॥

॥ श्रीभविष्यमहापुराण के शतार्थ साहस्री नामक संहिता के ब्राह्मपर्व में

स्त्रीधर्म का कथन नामक तेरहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ॥ १३॥

